राधारानी
रूपामृत

आप सब अति सौभाग्यवान् युगल सरकार दर्शनाभिलाषी सन्तों का स्वागत है। आप सब युगल सरकार दर्शनाभिलाषी हैं।

श्रील प्रबोधानन्द सरस्वती बताते हैं, वृंदावन महिमामृत में -

"आनन्द परसीमा, सीमा च सौभाग्य रस सारस्य।
हरि मधुरिमा अंत्यसीमा, वृंदावनं एव सेव्यगुण सीमा।।"

(वृंदावन महिमामृत ७.१४)

यह जो ब्रज है न, यह आनन्द की परसीमा है, आनन्द की अंतिम सीमा। यद्यपि सभी भगवत् स्वरूप..., प्रबोधानन्द सरस्वती कहते हैं- हरि के सभी स्वरूप आनन्दमय हैं, हरि के सभी आनन्द भी, सभी धाम भी आनन्दमय हैं और हरि की जो कान्ताऐं हैं ~ लक्ष्मी इत्यादि, वो भी आनन्दमय हैं..., लेकिन, मेरा मन तो केवल उन ठाकुर के पीछे जाता है, जो केवल..., किसी भी वैकुण्ठ धाम में नहीं होता; क्या? कि वे ठकुरानी के पीछे जाते हैं।

बताया जा रहा है - आनन्द परसीमा..., सौभाग्य सार सारस्य..., सौभाग्य रस सारस्य; सौभाग्य की जो अंतिम सीमा है, वो यह मधुर भाव का भजन है ब्रज का। हरि मधुरिमा ~ हरि का जो माधुर्य है..., जो आनन्द है, उसकी अंत्य सीमा, शेष सीमा..., हरि के आनन्दमय अवस्था की शेष सीमा ~ यह ब्रज धाम है।

जीव जो है, वह भौतिक या आध्यात्मिक जगत में कहीं पर भी जा सकता है, इच्छा शक्ति के द्वारा। तो प्रबोधानन्द सरस्वती क्या बता रहे हैं? स्थूल से ऊपर सूक्ष्म है; सूक्ष्म से ऊपर कारण है; उससे ऊपर तुरिया ब्रह्म है और उससे ऊपर वैकुण्ठ है। उससे ऊपर द्वारका; उससे ऊपर- जहाँ कृष्ण ने जन्म लिया ~ मथुरा; यह आनन्द की उत्तरोत्तर अवस्थाओं की बात हो रही है। यह जगत तो सत्-रज-तम का है, यह तो आनन्द..., यह तो जड़ है, यह तो आनन्द हो नहीं सकता। यह आनन्द के लोकों की बात हो रही है; उत्तरोत्तर क्या है? द्वारका से ऊपर मथुरा और मथुरा से ऊपर वह स्थान जहाँ कृष्ण सखाओं के साथ खेलते हैं। उससे भी ऊपर वह स्थान है; है क्या कोई? कृष्ण का जन्म स्थान हो गया; फिर कृष्ण जहाँ पर सखाओं के साथ खेलते हैं। नहीं, उससे भी एक श्रेष्ठ स्थान है। क्या? वह है जहाँ कृष्ण गोपियों के साथ कीड़ा करते हैं; वह है..., जो आनन्द पर-सीमा बोला, यह है वो आनन्द की सीमा। कृष्ण के सभी स्वरूपों की आनन्द परसीमा नहीं है। आनन्द की अंतिम अवस्था जो है ~ वो यह है।

आनन्द ..., रूप..., अमृत, ये सब समान शब्द हैं - synonyms..., रस ! आनन्द ! अमृत ! जो कृष्ण की छवि है..., जो कृष्ण का रूप है, वो इतना सुन्दर है..., इतना

सुन्दर है कि वो रूप का वर्णन करना सम्भव नहीं है; इतना सुन्दर है। यदि कोटि-कोटि सरस्वती कोटि काल तक कोटि-कोटि काव्य लिख लें, तो भी श्रीकृष्ण के रूप का..., श्री कृष्ण के रूप का वर्णन तो छोड़िए, श्री कृष्ण के रूप के एक अंग का भी सम्यक् रूप से वर्णन नहीं कर सकते; श्री कृष्ण इतने सुन्दर हैं। कहते नहीं हैं सुधानिधि में

"श्यामेति सुंदरवरेति मनोहरेति,
कन्दर्पकोटिललितेति सुनागरेति।
सोत्कण्ठह्रि गृणती मुहुराकुलाक्षी,
सा राधिका मयि कदा नु भवेत् प्रसन्ना।।"

(श्रीश्रीराधारस-सुधानिधि ३८)

इतनें सुन्दर है श्री कृष्ण। वृंदावन महिमामृत में बताया गया कि यदि कविगण कोटि-कोटि काव्य की रचना कर दें, श्री कृष्ण को तो छोड़िए..., जो वृंदावन है, उसकी एक छटा का भी वर्णन नहीं कर सकते। एक छटा का वर्णन कोटि काव्यों से नहीं हो सकता। क्यों? क्योंकि वो आनन्द.., आनन्द का वर्णन कैसे करेंगे? और श्री कृष्ण आनन्द की अंतिम अवस्था हैं। और इनसे ऊपर कोई नहीं है।

लक्ष्मी..., वह तक कृष्ण का..., कृष्ण के रूप से..., आनन्द का सार क्या है? रूप ही तो है। यह रूप ही तो मादक है। जो श्री कृष्ण हैं, उनका रूप इतना मादक है..., इतना आकर्षक है कि लक्ष्मी, जो नारायण की वक्ष स्थल निवासिनी हैं, वो कृष्ण की कामना करती हैं, संग की; इतना आकर्षक रूप है श्री कृष्ण का।

नागर! शुनो तोमार चरित।
कि चरित तोमार?
तोमार अधर अचेतन सचेतन कोरे।

तोमार अधर~ जो कृष्ण का अधर-सुधा है वो अचेतन को, जो जड़ है, उसको सचेतन कर देते हैं; यह कृष्ण की अधर-सुधा है। सभी नारियों का मन, श्री कृष्ण आकर्षित कर लेते हैं; इतने आकर्षक हैं। परन्तु ये ही मोहन..., ये ही मोहन, इनका चांचल्य जो है वो राधारानी के पास जाकर ही खत्म होता है। ये ही जो मोहन हैं, ये कृष्ण के..., जो कृष्ण हैं~ये राधारानी के चरणों पर लोटते हैं..., चरणों पर।

"पादस्पर्शरसोत्सवं प्राणतिभिर् गोविन्दम् इन्दीवर-
श्यामं प्रार्थयितुं सुमञ्जुलरहः कुञ्जांश्च सम्मार्जितुम्।
माला-चन्दन-गन्धपूर-रसवत्ताम्बूल-सत्यानका-
न्यादातुञ्च रसैकदायिनि तव प्रेष्या कदा स्यामहम्।।"

(श्रीश्रीराधारस-सुधानिधि ६१)

पादस्पर्शरसोत्सवं, जिन राधारानी के पाद का स्पर्श करना श्री कृष्ण के लिए रस उत्सव है; क्या है? रस..., रस का उत्सव है ~ पाद को स्पर्श करना..., चरणों को। तो जब..., यह तो बहुत ऊँची बात बता रहे हैं - पाद को। वृंदावन महिमामृत बताते हैं, कृष्ण के बारे में

"यद् अंग-रुचिभिर्महाप्रणय माधुरी वीचिभिर्
विचित्रं अवलोकयन् कनक चम्पक स्फूर्तिभिः।
विमुह्यति पद पदे हरिं अपूर्व वृंदावने
किशोरं इदं एवमे स्फुरतु धाम राधाभिधं।।"

(वृंदावन महिमामृत 3.31)

कृष्ण जो हैं- विमुह्यति, एकदम मोहित हो जाते हैं, पद-पद पर; किससे? राधारानी के दिव्य अंग से जो प्रेममयी जो छटा निकल रही है..., जो दीप्तिमान जो छटा निकल रही है, प्रेम से निकली हुई छटा..., यह रोशनी नहीं, प्रेम छटा से। उस मादक..., मादनाख्य महाभाववती राधारानी की जो छटा है, उससे *विमुह्यति पदे पदे हरें* ~ पद पद पर मोहित हो जाते हैं; अभी तो राधारानी आई नहीं, उनकी छटा से।

जब श्री कृष्ण राधारानी का दर्शन करते हैं; आपको पता है यह क्या बात है, राधारानी का दर्शन? राधारानी कौन हैं? ये वो हैं जिनके पीछे सब नारियाँ आकर्षित हैं। वो उनके चरणों पर लोटते हैं; वो भी जब कृपा हो जाए। सब के ठाकुर - ठाकुर; और ठाकुर की ठाकुर? ठकुरानी । ऐसे राधा का भजन कर रहे हैं हम, जिनके चरण पर लोटत श्री कृष्ण।

श्री कृष्ण..., बताते हैं, चैतन्य चरितामृत् में वर्णन आता है-

"आमा हैते आनन्दित हय त्रिभुवन।
आमाके आनन्द दिबे ऐछे कोन जन।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत् आदि लीला ४.२३९)

कोन जन ऐछे, आमाके आनन्द दिबे? श्री कृष्ण तो आनन्द स्वरूप हैं, उनको आनन्द कौन दे सकता है? श्री कृष्ण खुद बोल रहे हैं - *आमाके आनन्द दिबे, ऐछे कोन*

जन? कोनो जन होबे न। आमाके आनन्द? आमि आनन्द स्वरुप; आमाके आनन्द? एक व्यक्ति दे सकते हैं - कि जिसके गुण मुझसे भी अधिक हो, श्री कृष्ण कहते हैं, वह मुझे आनन्द दे सकता है।

"आमा हैते जार हय शत शत गुण।
सेइ जन आह्लादिते पारे मोर मन।।"
(श्री श्री चैतन्य चरितामृत आदि लीला ४.२४०)

आमा हैते जार हय शत शत गुण, जिनके मुझसे भी ज्यादा गुण हैं, शत शत, वो मुझे आनन्द दे सकता है। फिर बोलते हैं-

"आमा हैते गुणी बड़ जगते असम्भव।
एकलि राधाते ताहा करि अनुभव।।"
(श्री श्री चैतन्य चरितामृत आदि लीला ४.२४१)

जगते, यह गुण होने वाला - असम्भव, सम्भव नहीं है। *एकलि राधाते ताहा करि अनुभव,* एकमात्र राधारानी ही हैं, जो उस आनन्द की परसीमा को भी आनन्द देती हैं।

जो जीव है, उसका जो मन चंचल है, वो तभी तक है, जब तक वह भगवान् के दर्शन नहीं करता। जिस क्षण उस छटा के दर्शन कर लेंगे..., हरि के दर्शन कर लेंगे, सारी चंचलता समाप्त। लेकिन ये ठाकुर, जिनको देखकर सबकी चंचलता समाप्त हो जाती है, ये चंचल बने रहते हैं जब तक इनको राधारानी के रूप के दर्शन नहीं हो जाते। इनकी चंचलता समाप्त होती है राधारानी के दर्शन से ही। और ये दर्शन हैं? ये रूप है? ये रूप का कौन वर्णन करेगा? ये रूप है, कि रस है, कि आनन्द है, कि महा-आनन्द है?

श्री कृष्ण जब राधारानी की ओर दर्शन करते हैं, तो राधारानी के जिस अंग पर श्री कृष्ण की दृष्टि चली जाए..., नयन चले जाएँ, वो उस अंग के अलावा कृष्ण कुछ देख ही नही पाते। यदि कपोल पर दर्शन चले गए, तो श्री कृष्ण के नयनों में बस गलित छवि, वो कपोल ही छा जाएँगें। फिर श्री कृष्ण कुछ नहीं देख सकते। ये जो नयन हैं, इनको क्या चाहिए? क्या चाहिए? आनन्द। *आमाके आनन्द दिबे, ऐछे कोन जन? राधिका ओ जन, जो तोमाके आनन्द दिबे।* जब दर्शन करते हैं श्री कृष्ण... राधिका को बोला गया है, प्रबोधानन्द सरस्वती ने - *रसैकदायिनि;* सुधानिधि में। *रसैकदायिनि !* वो कृष्ण को रस प्रदान करती हैं; जिसके लिए वे सदा लालायित रहते हैं।

श्री कृष्ण जब उनके कपोल के दर्शन कर रहे हैं तो किस के दर्शन कर रहे हैं वास्तव में वे? किसके दर्शन कर रहे हैं? रस! रस स्वरूप ही तो हैं राधारानी। उनके कपोल क्या हैं? रस! चिबुक क्या है? रस! नयन प्रदेश क्या है? रस! तो जो चाहिए था वो ही तो मिल गया; अब दर्शन कोई ओर क्यों करें? रस चाहिए था कृष्ण को, वो ही तो मिल गया।

अंग-अंग राधारानी का..., ये जो हृदय है न, ये कृष्ण का हृदय - ये राधारानी हैं। राधारानी का जो अंग-अंग है - वो शोभा का सागर है। किसका सागर है? आनन्द का..., शोभा का..., माधुर्य का सागर है; क्या? एक-एक- अंग सागर है..., सागर! और राधारानी स्वयं क्या हैं? आनन्द की..., प्रेम की महासागर। तो एक-एक अंग पर जो है, वो एक बारी छवि चली..., नयन पहुँच जाएँ, तो वहाँ से निकालना मुश्किल है कृष्ण को। वो वहीं पड़ जाते हैं। फिर वो जो कुछ देख रहे हैं..., वो कपोल देख रहे हैं, तो कपोल..., कपोल प्रदेश ही नज़र आएगा। इतना मेहनत करनी पड़ती है, इतना प्रयत्न करना पड़ता है कृष्ण को, एक अंग से निकाल के दूसरे अंग पर दर्शन करने के लिए, राधारानी के। कपोल प्रदेश से निकालें, कितनी मेहनत करनी पड़ती है। आप किसी दूसरे देश में चले जाओ, वहाँ से दूसरे देश में जाने के लिए कितनी मेहनत करनी पड़ती है; क्यों? इतना बड़ा महासागर है वो देश। पार करना आसान काम है एक देश को? ये कपोल प्रदेश- रस का महासागर, पार करें तो कैसे?

फिर चिबुक पर आए..., चिबुक पर आए तो सारे नयन चिबुकमय हो जाएँ; हर समय चिबुक प्रदेश। जब वो चिबुक को देख..., दर्शन कर रहे हैं..., कपोल के दर्शन, किसके दर्शन कर रहे हैं? जिसके वो चाहते थे। वो रस को प्राप्त करना चाहते..., वो ही रस-स्वरूप के महासागर के। और एक-एक जो अंग है, वो महासागर है आनन्द का। और सागर ही सागर; एक सागर से निकले तो दूसरे सागर में फँस गए। दूसरे सागर से निकले और यदि कृष्ण ने राधारानी के नयनों के दर्शन कर लिए, तो क्या होगा? आप सोचो। यदि कपोल प्रदेश के दर्शन करके यह हालत है, तो यदि नयनों के दर्शन हो गए तो? और सर्वज्ञ के दर्शन कैसे करेंगे वो? झेल पाएँगे क्या?

"वेणुः करान्निपतितः स्खलितं शिखण्डं,
भ्रष्टं च पीतवसनं व्रजराजसूनोः।
यस्याः कटाक्षशरघात-विमूर्च्छितस्य,
तां राधिकां परिचरामि कदा रसेन।।"

(श्रीश्रीराधारस-सुधानिधि ३९)

तस्य कटाक्षशरघात-विमूर्च्छितस्य! राधारानी के आगे इन प्रभु की सारी प्रभुता fail हो जाती है; ये सारी प्रभुता fail हो जाती है।

अंग-अंग जो हैं, शोभा का सागर है। एक अंग को देखना चाहते हो..., सखी को बोलते हैं - "हे सखी! मैं तो राधारानी के सम्पूर्ण दर्शन करना चाहता हूँ।" तो सखी कहती हैं - "हाँ तो करो न, तुम्हारे सामने..., नित्य तो तुम्हारे साथ हैं, तो करो दर्शन।" कहते हैं - "करुँ कैसे?" जिस अंग पर दृष्टि पड़ती है, वो उसके बाद कहीं और जा ही नहीं सकते। ये रूप इतना बलवान् है..., इतना बलवान् है ये रूप। रूप नहीं, रूप का एक-एक.., एक अंग..., एक छटा जो है, राधारानी की जो एक छटा है, वो कृष्ण को पूर्ण रूप से बन्दी बना लेती है; पूर्ण रूप से। कृष्ण से सम्भाला नहीं जाता स्वयं को; वे सम्भाल नहीं सकते स्वयं को। आप यह देखिए, अभी तो श्री कृष्ण ने दर्शन किए हैं राधारानी के एक अंग के तो यह दशा है; यदि वे उनको छू लेंगे, तो क्या होगा? वे सम्भाल पाएँगे स्वयं को?

अच्छा, कौन किसको छुएगा? रस स्वरूप..., *रसो वै सः* छुएँगे *रसैकदायिनि* को। तो रस स्वरूप ही *रसैकदायिनि* का परस्पर के लिए वो रस है; वे छू रहे हैं। तो राधारानी हैं प्रेम स्वरूप; प्रेम मतलब - वे श्री कृष्ण को आनन्द देकर ही आनन्दित होती हैं। आप यह सोचिए - जब एक बारी श्री कृष्ण ने चिबुक प्रदेश को पकड़ा, तो कृष्ण कितने आनन्दित हो रहे होंगे? हो रहे हैं? और जिसका पकड़ा, वो कितनी आनन्दित हो रही होंगी। जिन्होंने पकड़ा, वो कितने आनन्दित हो रहे हैं। जब श्री कृष्ण आनन्दित हो रहे हैं तो उनको राधारानी देखकर कितनी आनन्दित हो रही होंगी, कि मैं ठाकुर जी को प्रसन्न कर पा रही हूँ; वो और आनन्दित हो जाती हैं, उनका माधुर्य और बढ़ जाता है। फिर श्री कृष्ण और पान करते हैं, तो और खुश हो जाते हैं। तो राधारानी इसको देखती हैं कि ये और आनन्दित हो रहे हैं, राधारानी का माधुर्य और बढ़ जाता है। राधारानी का माधुर्य बढ़ा, श्री कृष्ण ने देखा, और बढ़ा माधुर्य, और पान करते हैं।

अरे भाई पान ही तो करना है! रूप ही तो सार है। अरे छप्पन (५६) भोग थोड़े न खाना है; रस तो पीना है आपने। छप्पन भोग...छत्तीसों व्यंजन, इनके रूप के आगे -

खाना-पीना नहीं सुधी बिसराय।
ऐ सुधी बिसराबे न - खान पीन की।

वो रस पी रहे हैं, वो ही हमने पीना है..., आपने पीना है।

राधारानी और आनन्दित होती रहती हैं; फिर आनन्द को देखकर श्री कृष्ण और पान करते हैं, तो और आनन्दित होते हैं। फिर राधारानी देखती हैं - और खुश कर पाई हूँ, तो और आनन्दित होती हैं। तो इस प्रकार से जो होड़ है दोनों के..., बताते हैं न सौंदर्य का अंत नहीं होता..., वो सौंदर्य बढ़ता रहता है। कैसे बढ़ता है? ऐसे

बढ़ता है। समझ आया? ऐसे वो आनन्द का..., सौंदर्य का विकास होता ही रहता है; खत्म हो ही नहीं सकता। और इसमें आप कैसे..., आप क्या कर रहे हो? श्री कृष्ण राधा के माधुर्य का दर्शन कर रहे हैं- वर्धित माधुर्य का... और राधारानी श्री कृष्ण के वर्धित माधुर्य का दर्शन कर रही हैं; और आप? राधारानी के भी माधुर्य का, वर्धित माधुर्य का, श्री कृष्ण के भी वर्धित माधुर्य का दर्शन और साथ में सेवा भी प्रदान कर रहे हैं कि ये वो आनन्द प्राप्त कर पाएँ, कहीं बेहोश न हो जाएँ; हो जाए तो उनको सचेत कर रहे हैं हम ~ यह आपकी सेवा है। तो सोचिए कितने ऋणी होंगे वे? कितने ऋणि रहेंगे श्री कृष्ण..., राधारानी? श्री कृष्ण जो हैं, वे तो सिर्फ..., सिर्फ गोपियों के ऋणि हैं..., गोपियों के ऋणि हैं-

"न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां, स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषापि वः।
या माभजन्दुर्जरगेहश्रृंखलाः, संवृश्च्य तद्वः प्रतियातु साधुना।।"

(श्रीमद् भागवतम्-१०.३२.२२)

"मैं गोपियों का सदैव ऋणि हूँ।" राधारानी तो ऋणि नहीं हैं बाकि गोपियों की। परन्तु मंजरियों के ऋणि तो ठाकुर-ठकुरानी दोनों हैं। रहेंगे! रहना पड़ेगा!

"सखी विना एइ लीला पुष्टि नाहिं हय।
सखी लीला विस्तारिया सखी आस्वादय।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत मध्य लीला ८.२०३)

अजी शुरु न होए, पुष्टि कोथा होए? शुरु कैसे होगी? वे तो विमूर्च्छित- *तस्य कटाक्षशरघात-विमूर्च्छितस्य,* वे तो विमूर्च्छित हो जाएँगे; लीला प्रारम्भ कैसे होगी आपके बिना?

बताया गया है, प्रबोधानन्द सरस्वती बताते हैं कि राधा-कृष्ण तो अपने..., एक-दूसरे में पूर्ण रुप से मग्न रहते हैं; उनको किसी प्रकार का होश ही नहीं रहता कि क्या करें और क्या न करें? तो उनके जो वस्त्र हैं..., इत्यादि जो कार्य हैं, क्या बता रहे हैं प्रबोधानन्द सरस्वती?

"अनुक्षण मदाविष्टौ न विदन्तौ न किञ्चन।
कार्य-मानौ सखी वृंदेर भोजन आच्छादिकं।।"

(वृंदावन महिमामृत ३.३५)

हर क्षण राधा-कृष्ण, हर क्षण एक-दूसरे में ~ *मदाविष्टो,* पूरे मत्त रहते हैं, हर क्षण। उनको कुछ भी सुधी नहीं रहती। उनको कोई होश नहीं रहती। वे जानते ही नहीं हैं किसी भी बारे में; उनको जो भोजन है..., उनको जो वस्त्र धारण भी हैं, वो कार्य भी सखियों के द्वारा ही सम्पादित होता है; उनकी इच्छा से यद्यपि। परन्तु सखियों द्वारा

ही सम्पादित होता है; क्या कार्य? *भोजन, आच्छादिकं*, आच्छादिक मतलब वस्त्र। वे होश में नहीं रहते। रस पान कर रहे हैं न।

छप्पन भोग है ~ वो जब जिह्वा पर आएगा, तो कुछ तृप्ति या कुछ so-called आनन्द होगा। परन्तु ये जो रूप है, ये तो दर्शन से ही परमानन्द प्राप्त हो जाएगा। सुध..., भूख-सुधी-बुधी बिसराय, सब भूल जाएँगे बाकी इसके बाद। यह तो जिह्वा के अग्र भाग को स्पर्श न करे छप्पन भोग, तो कोई..., कोई..., कोई लाभ नहीं है छप्पन भोग का। परन्तु ये जो रूप के दर्शन हैं, ये तो दर्शन करते ही सारी इन्द्रियों का आहार प्राप्त हो जाता है।

जब प्रातः लीला में राधारानी श्री कृष्ण के लिए भोजन बनाती हैं; उसके बाद जब उनको परोसा जा रहा होता है, तो परोसते-परोसते श्री कृष्ण आनन्द में हो रहे हैं; आनन्द में तो हो रहे हैं कि राधारानी का बनाया हुआ भोजन है, परन्तु उनकी भूख भी जाए जा रही है; क्यों? भोजन कितने इन्द्रियों का आहार है? जिह्वा का। कृष्ण सोचते हैं- "मुझे मेरी सारी इन्द्रियों का आहार ये दर्शन करके ही मिल रहा है।" वे भोजन कर रहे हैं-देख रहे हैं-निहार रहे हैं; निहार रहे हैं-निहाल हो रहे हैं..., निहार रहे हैं-निहाल हो रहे हैं..., फिर निहाल ही निहाल हो रहे हैं। भोजन की रुचि ही चली गई। क्यों? एक इन्द्रिय का आहार मिल रहा था; ये तो सर्वेन्द्रियों का आहार मिल रहा है।

जब राधा-कृष्ण मंगला के बाद कुंज से घर को जाते हैं, तो साथ में गलबईयाँ लेकर जाते हैं, तो श्री कृष्ण अगर एक बार राधारानी को दर्शन, यूँ कर के देख लें; तो फिर क्या होता है? चल नहीं सकते; सम्भव नहीं है। अरे सम्भव ! चलना क्या? पुलकावली से..., रोमांच से..., कम्पन से, वहीं पर..., कृष्ण की मूर्छा किसी भी क्षण आ सकती है। और यह मूर्छा क्या है? यह कोई भौतिक मूर्छा नहीं है; यह आनन्द मूर्छा है..., यह रस मूर्छा है। दर्शन कर रहे हैं तो चलना बन्द। चल रहे हैं, तो सोचते हैं दर्शन बन्द हो रहे हैं; फिर दर्शन करते हैं, तो चलना बन्द हो जाता है।

राधारानी के जो एक लट निकली हुई है..., एक लट निकली हुई है, उसको सम्भालने के ब्याज से राधारानी को छूने की कोशिश करते हैं। यह तो बाद में है, छोड़िए। एक लटा जो है, राधारानी भी कुछ कर रही हैं, एक लटा को देखकर ही कृष्ण उसमें बँध, बँध जाते हैं बिल्कुल। तो सखी बोलती हैं- "ये कैसे तुम्हारे सर्वाङ्ग का पान करेंगे? एक लटा ने ही इनको पूरा बाँध दिया है तुम्हारी।" एक लटा में पूरे बँध जाते हैं। और जब उसको हटाने के लिए, कि "हाँ पीछे कर दूँ", तो जैसे ही छूते हैं ~ उसी वक्त कम्पन शुरु हो जाती है। तो आप यह सोचो कि अभी तो कुछ..., अभी तो यह रस का खेल प्रारम्भ भी नहीं हुआ; यह तो प्रारम्भ की अवस्था है।

और आचार्यगण क्या बताते हैं? यह जो राधा-कृष्ण का जो कुंज में मिलन है; कौन सा मिलन है? सर्वाङ्ग मिलन; ये दर्शन यदि कोई कर ले, तो किसी भी भगवद् राज्य का कोई भी सुख जो है~ वो एक कण.. एक कण के समान भी नहीं है। क्यों? उस समय वे रस-स्वरूप और वे रसैकदायिनि अपने आनन्द की परमावस्था को प्राप्त होते हैं। सर्वाङ्ग मिलन से सर्वाङ्ग माधुर्यामृत बढ़ता रहता है..., बढ़ता रहता है और पान करते रहते हैं कृष्ण..., वे राधारानी उनको देखकर और आनन्दित होती है कि मैं उनको पान करवा पाई; उनको पान करवा पाई देखकर और सुंदरता बढ़ती है, श्री कृष्ण और पान करते हैं... और पान करते हैं, तो राधारानी और खुश होती है। और जो सखी हैं..., खाए कोई ओर, और तृप्ति किसी और को हो रही है; खा कौन रही हैं और हरा-भरा किसका हृदय हो रहा है? शीतल किसका हृदय हो रहा है? ऐसे ही विलसो मेरे युगल सरकार! तुम और विलसो! और दुआएँ दे रही हैं... और उनकी बलाएँ-अलाएँ..., आरती उतार रही हैं~ऐसे ही सदा विलसते रहो।

ये राधारानी की इच्छा है। राधारानी रूपामृत का पान कर रहे हैं आप सब; ये उन्हीं की, किशोरी जी की कृपा से ही होता है।

"बिना हरि कृपा, मिले नहीं संता।।"

(रामचरितमानस)

बिना हरि कृपा के तो संत का ही दर्शन नहीं होता..., संत ही नहीं मिलते; ये तो राधारानी अपने आप को लुटा रही है। राधारानी का रूपामृत पान, राधारानी की कथा का पान, जब तक राधारानी की इच्छा न हो, किसी को नसीब हो नहीं सकता।

कोई बोले कि- मुझ पर कृपा है कि नहीं राधारानी की? तो यह हम देख लें- क्या हमें राधा रूपामृत का पान हो पा रहा है? क्या ऐसे किसी संत का सान्निध्य प्राप्त है? क्योंकि

"श्रीमद् भागवत् अर्थ आस्वादानाम् रसिकः सह"

(श्री भक्तिरसामृत सिन्धु बिंदु ४.६१)

भागवत् का अर्थ जो है, रसिक सन्तों के सान्निध्य में..., संरक्षण में रहकर ही समझना चाहिए। तो प्रबोधानन्द सरस्वती भी कहते हैं-

"रसिक भक्त संगे, रहियो प्रीति रंगे"

तो रसिक भक्तों के संग में रहना चाहिए और इस प्रेम कथा रंग प्रसंग का पान करते रहना चाहिए। तो राधारानी की कृपा यही है कि वे रसिकजन का हमें संग दिला दें।

राधारानी की कृपा से ही किसी रसिक महापुरुष का संग प्राप्त होता है और रसिक महापुरुष के संग से ही फिर राधारानी प्राप्त होती हैं। जब राधारानी अपने आप को लुटाना चाहती हैं किसी जीव के ऊपर, तो वे किसी रसिक महापुरुष का संग दे देती हैं; और फिर उनकी कृपा से फिर राधारानी मिल जाती हैं। यह उनकी अनुकम्पा के बिना हो नहीं सकता। हो नहीं सकता! अरे कोई अपने कमरे में..., अन्दरूनी कमरे में बुलाता है कोई किसी को क्या? वो भी जीवन भर के लिए? शाश्वत काल के लिए? निकुँज में आपको बुला रहीं हैं सबको। ऐ सखी चल, निकुँज में चल! तो उनकी कृपा के अधीन ही है उनकी कथा। न हम बोलने वाले..., न आप सुनने वाले। वे ही जनाना चाहती हैं, वे ही जनवाना चाहती हैं जिसको वो बिठाती हैं, बुलवाती हैं, सुनवाती हैं।

राधारानी इतनी सुन्दर हैं..., इतनी सुन्दर हैं; अगर वे अपने आप का प्रतिबिम्ब भी देख लेती हैं..., जो सुन्दर होगा न वह भीतर से भी सुन्दर होगा। तो भीतर से इतनी सुन्दर हैं कि अपना प्रतिबिम्ब जल में देखती हैं न, तो कहती हैं- "अरे यह सुन्दरी कौन है? यह सुन्दरी कौन है? इतनी सुन्दर। इतनी सुन्दर तो मैंने.., मैंने कभी किसी को देखा ही नहीं है। इतनी सुन्दर..." किसको देखकर? अपना प्रतिबिम्ब जल में देखकर कह रही हैं - "कितनी सुंदर है यह। हाय, श्याम को पता चल जाए..., मिल जाए, तो श्याम तो..., श्याम को कितना आनन्द प्राप्त होगा। सुन्दरी, कितनी सुन्दर है यह।" उनको विश्वास ही नहीं होता कि यह वे हैं, स्वयं हैं। सखी कितना बोल रही हैं - "राधे तू ही है, तुम्हारा ही प्रतिबिम्ब है यह।" "कैसी बात कर रही है? मैं! मैं इतनी सुन्दर हो ही नहीं सकती। मैं इतनी सुन्दर?" वो बार-बार कह रही हैं- "नहीं राधे, तुम ही हो यह; यह तुम्हारा ही प्रतिबिम्ब है।" राधे कहती हैं- "मैं हूँ? तू चुप रह! मैं तो कभी इतनी सुन्दर हो ही नहीं..., मैं कभी थी ही नहीं इतनी सुंदर। और तू मुझे छोड़; मैनें कभी इतनी सुन्दर, कोई नागरी देखी ही नहीं है कभी। त्रिलोकी में कोई इतना सुन्दर नहीं हो सकता। यह मैं हूँ ही नही; यह मैं कैसे हो सकती हूँ?"

अब सखी परेशान हो रही हैं कि कैसे विश्वास दिलाएँ कि यह तो तुम ही हो? सखी कहती हैं, "अच्छा एक बात बताओ, यह जल है?" "हाँ।" "यह तुम हो?" "हाँ।" "यह माला है?" "हाँ।" "यदि मैं तुम्हें पहनाऊँ, तो यह प्रतिबिम्ब जल में आएगा?" "हाँ आएगा।" "अगर यही माला जल में आ जाए, तो तुम मान लोगी कि ये तुम हो?" "हाँ, फिर मैं मान लूँगी।" "अच्छा ठीक है, यह लो माला।" *कृष्ण प्रसादी नैवेद्यम् श्री राधा राधिकाए नमः।* तो राधारानी को माला पहनाई; और वे रूप देखें- "अरे, यह तो मैं ही हूँ।" वे संकुचा गईं..., शरमा गईं। अब वे कैसे बोले कि मैं इतनी सुन्दर हूँ?

तो, कई बारी यह कौतुक जो है ठाकुरजी भी देखते हैं, उनके सामने भी यही दशा हो जाती है- "मैं इतनी सुंदर हो ही नहीं सकती।" ठाकुर कहते हैं- "प्रियाजी, आपके अलावा कोई इतना सुन्दर हो सकता है क्या? कोई भी हो सकता है बताओ? यह आप ही हो..., आप ही हो केवल यह।"

तो, बार-बार बोलकर, समझाकर बताते हैं किसी प्रकार श्री कृष्ण कि, "राधारानी आप ही हो।" और जो कृष्ण की सखियाँ हैं, जो राधारानी की सखियाँ हैं, वे इस माधुर्य का निरन्तर पान करती रहती हैं, इस रस, इस लीला का। ये विहार तो निरन्तर है; इसका तो अन्त ही नहीं है। अन्त कैसे होगा? इतना बड़ा महाप्रदेश है - चिबुक प्रदेश, कपोल प्रदेश, नयन प्रदेश, नाभि स्थल प्रदेश, सुभग नासा। और यह तो अभी हमने एक इन्द्रिय..., यह तो केवल दर्शन से है; क्या राधारानी के केवल दर्शन प्राप्त हो रहे हैं? श्री कृष्ण क्या कहते हैं?

"यद्यपि आमार गंधे जगत सुगंध।
मोर चित्त प्राण हरे, राधा अंग गंध।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत आदि लीला ४.२४५)

जो राधारानी के अंग की जो गन्ध है, वह श्री कृष्ण का... *मोर चित्त प्राण हरे* - मेरा चित्त प्राण, उनकी अंग की गंध हर लेती है। तो जब दर्शन हो रहे हैं, तो अंग की गंध नहीं प्राप्त हो रही क्या? रस कहाँ-कहाँ से प्रवेश नहीं कर रहा श्री कृष्ण में। यहाँ से, यहाँ से, यहाँ से... और यहाँ से भी चाहते हैं, यहाँ से भी चाहते हैं। रस ही रस प्रवेश कर रहा है; लबालब हो रहे हैं रस में। *मदाविष्टो सदा अनुक्षण,* हर क्षण आनन्द में आविष्ट रहते हैं; अपनी होश नहीं है उन्हें। सारा भार जो है, वो सखियों पर रहता है लीला सम्पन्न करने का। अपने आप से ये तो खुद को ही नहीं सम्भाल सकते हैं।

और कोई उपमा दे; राधारानी की कोई उपमा भी क्या देगा? राधारानी के समान कोई हो तो कोई उनकी उपमा दी जाए। प्रबोधानन्द सरस्वती बताते हैं- वैकुण्ठेश्वर जो हैं, वैकुण्ठेश्वर, यानि कि नारायण; वे विमोहित रहते हैं श्री कृष्ण के वेणु के ऊपर। कोटी-कोटी श्रीपति की शोभा को तिरस्कार करने वाली - ये शोभा है युगल सरकार की। कोटी-कोटी लक्ष्मी नारायण। जिस लक्ष्मी की पूजा करते हैं- *सुख सम्पत्ति घर आवे, कष्ट मिटे तन का;* वो तो कृष्ण के प्राप्ति के लिए तपस्या करती हैं। वह प्राप्त नहीं कर पाती। तो जो दास्य..., जो संग, लक्ष्मी को, जो दुर्लभ को दुर्लभ है। सबसे दुर्लभ क्या है? हरि भक्ति। और यह राधारानी की जो सेवा है, राधारानी का दर्शन जो है - यह तो महादुर्लभ है। जो लक्ष्मी को भी दुर्लभ है, वो

महाप्रभु की असीम कृपा से सबको सुलभ होए हुए हैं; वे पात्र-अपात्र का विचार किए बिना लुटाए जा रहे हैं।

ये जो ग्रन्थ हैं; ये क्या हैं ग्रन्थ? सुधानिधि, वृंदावन महिमामृत, विलापकुसुमाञ्जलि, ये क्या हैं ये ग्रन्थ? ये रस रत्न हैं। ये रस के रत्न हैं। दर्शन करने हैं, तो दर्शन कैसे करने हैं? किसको यह रस के दर्शन होंगे? किसको यह रस प्राप्त होगा? रसिक अनन्य को। अनन्यता होनी होगी; सारे भावों को छोड़कर अनन्य होना होगा। राधारानी का अनन्य उपासक ~ उसको ही यह आनन्द प्राप्त होगा।

यह कोई दास्य, साख्य, वात्सल्य नहीं है; यह तो श्रृंगार की भी परावस्था है। यह कोई दास्य, साख्य, वात्सल्य थोड़े न है यह। जो दास्य है..., साख्य है..., वात्सल्य है, इसमें प्रधानता किसकी होती है? किसकी होती है प्रधानता? ठाकुर जी की। और श्रृंगार में भी, गोपियों के साथ जो मिलन है उसमें प्राधानता किसकी होती है? ठाकुर जी की। परन्तु यह जो राधारानी की सेवा है, इसमें प्रधानता किसकी होती है? ये ठाकुर की भी ठाकुर हैं। ठाकुर की ठाकुर ~ ठकुरानी। तो जिस रस में प्रधानता ठाकुर जी की होगी, तो एक बूंद मिलेगी हमेशा। एक बूंद आनन्द चाहिए, तो वो ठाकुरजी की प्रधानता से कोई भी सेवा कर लो- साख्य..., दास्य..., वात्सल्य इत्यादि ~ तो एक बूंद प्राप्त होगा। जो जहाँ वल्लभा की प्रधानता होगी; कोई वैकुण्ठ लोक में वल्लभा की प्रधानता नहीं है; केवल ब्रज में है। जहाँ वल्लभा की प्रधानता होगी, वहाँ नव-नव महासागर में सखियाँ निमज्ज रहेंगी हमेशा अनादिकाल तक। क्यों रहेंगी? क्योंकि नव-नव महासागर में ठाकुर-ठकुरानी दोनों निमज्ज रहते हैं। उनके दर्शन करते-करते, वे तो ज़्यादा मत्त रहती हैं। राधारानी कृष्ण से आनन्द प्राप्त करके महानन्दित होती हैं; कृष्ण प्रियाजी से आनन्द प्राप्त करके महानन्दित होते हैं; ये दोनों के दर्शन पी-पी कर..., पी-पी कर..., पी-पी कर महानन्द में हमेशा रहती हैं।

जो मंजरी की सेवा है..., जो मंजरी का सुख है, वही तो आपका सुख है; यही तो उपासना है। यह आगे जाकर प्राप्त नहीं होगा; यह तो प्राप्त ही है। यह प्राप्ति नहीं होनी है; यह प्राप्त है। प्राप्त होना मतलब इसके ऊपर कुछ होगा, वो। यह रस-रूप में यह ग्रन्थ हैं। दर्शन करने हैं ठाकुर जी के? ग्रन्थ खोलो ~ करो ठाकुर के दर्शन, करो राधारानी का रूपामृत का पान। जो हम बता रहे हैं ये रस ग्रन्थों से ही तो बता रहे हैं। जब दर्शन करने हो- ग्रन्थों में..., खोलो ~ राधारानी के दर्शन प्राप्त करो।

ग्वारिया बाबा थे, ब्रज के सन्तों में बताया जाता है..., वे कहते थे- "आँख बंद कर, यार के दर्शन।" वे सखा भाव के उपासक थे। "आँख बंद कर, कर यार के दर्शन।" हम को तो यार के नहीं करने; हम को तो, *'पाद-स्पर्श रसोत्सवं '*, उनके दर्शन

करने हैं। गोविन्दम्..., उनका नाम ही गोविन्द इसलिए है कि उनकी इन्द्रियाँ सदा श्री राधारानी के..., प्रत्येक इन्द्रिय जो है राधारानी से आनन्द प्राप्त करती रहती है; इसलिए उनका नाम है गोविन्द। सारी इन्द्रियाँ का आनन्द, आहार जो है ~ राधारानी से प्राप्त होता है। गोविन्द!

तो रसिक अनन्य को यह रस प्राप्त होता है; यह सबको प्राप्त नहीं होता। तो यदि हमारे को..., ये ग्रन्थ हैं, प्राप्त हैं, यह जो रस है आपको यह प्राप्त करने के लिए कहीं दूर नहीं जाना; यह आपकी मुट्ठी में हैं। यह नहीं कि आगे जाकर प्राप्त; यह तो मुट्ठी में ही हैं। अगर ध्यान से करोगे, सुनोगे, पढ़ोगे, समझोगे ~ तो रस प्राप्त होता रहेगा। और लापरवाही करोगे, तो कभी कुछ प्राप्त नहीं होगा। तो प्राप्त तो है ही है; प्राप्त होगा क्या? प्राप्त चीज़ कहाँ से प्राप्त होगी? प्राप्त तो है ही। लापरवाही न करके बस हम जान लें कि कितनी बड़ी महाकृपा हो गई- हमें रूपगोस्वामी, रघुनाथदास गोस्वामी, प्रबोधानन्द सरस्वती, इनके रस रत्न प्राप्त हो गए। यह कितनी बड़ी कृपा है - रसिकजन के संग प्राप्त हो जाए। यह संयोग अनूप। यह अनूप संयोग है; क्या?

मानुष तन,
वृंदावन,
यह मधुर भजन
और
रसिकजन का संग।

ये सब कुछ प्राप्त हो जाए। क्या? मानुष तन, ये वृंदावन का भजन..., मधुर भजन, रसिक सन्तों का संग; इससे ऊपर और क्या प्राप्त होगा? अपना भाग्य मनाओ, आनन्द मनाओ।

तद् अनन्त भाग्यम्। तद् अनन्त भाग्यम्। आपका सबका भाग्य है जो राधारानी के रूपामृत का पान कर पा रहे हैं; ये सबका भाग्य अनन्त है। यह बताया था न हमने प्रथम श्लोक में - *सौभाग्य रस सारस्य;* सौभाग्य की अन्तिम सीमा है ~ राधारानी के रूपामृत का पान करना, जो सदा श्री कृष्ण करते रहते हैं। अगर वे राधारानी के रूपामृत का पान नहीं करेंगे, तो क्या वे जीवित रह पाएँगे? तो हम क्यों जीवित रह रहे हैं? हमें भी उनका रूप का निरन्तर पान करते रहना चाहिए। अरे! दोनों की ईश्वरी तो एक ही हैं, आप भी राधारानी के रूपामृत का पान कर रहे हो; हम तो आपके दोनों का कर रहे हैं..., दोनों का।

जब हमें संग प्राप्त हो गया, ये रस रत्न प्राप्त हो गए, आप एक बात सोचो - यदि आप रास्ते में चल रहे हो, आपको पता चल जाए आपके पाँव के साथ में कोहिनूर

हीरा है या सोने की मोहरे हैं; तो क्या करोगे? छोड़ोगे उसको तुम? तुरंत पकड़ लोगे। और जब तक जेब में नहीं डालोगे, आनन्द नहीं आएगा। और दिमाग उसमें लगा रहेगा हमेशा। लगा रहेगा कि नहीं? कोहिनूर अगर हीरा प्राप्त हो जाए। अगर पता नहीं है कि यह कोहिनूर हीरा है, फिर क्या करोगे? ओह पत्थर होगा कोई; देखोगे भी नहीं।

तो जब ज्ञात हो जाए कि सबसे बड़ी कृपा क्या होती है, सबसे बड़ा आनन्द क्या होता है; वह कैसे प्राप्त होता है..., तो बस दिन ही दिन अपना आनन्द मनाओ। राधारानी का रूपामृत का पान करो, सन्तों के दर्शन, ग्रन्थों के माध्यम से राधारानी के दर्शन प्राप्त करें; अक्षर रूपी नयन से राधारानी रूपी छवि का पान करें, अपने हृदय को हरा भरा करें..., शीतल करें। जो मंजरी हैं, उनका हृदय जो है, वो तो ठाकुर जी के दर्शन से भी शीतल नहीं होगा। वो तो नहीं होगा।

तो जो चीज़ प्राप्त है, तो उसमें लापरवाही न करें, तो प्राप्त ही तो है। कुछ आगे थोड़ा न प्राप्ति करनी है। अभी मिला हुआ है; आगे नहीं मिलना। यह सब मिल गया; अब तो बस मौज मनाओ कि मिल गया। राधारानी की कृपा को हमेशा स्मरण करो कि हमें यह मार्ग मिल गया। और जो कृपा हो गई है, तो भई लाभ उठा लो, यह संयोग अनूप। यह संयोग दोबारा तो मिलेगा नहीं - मानुषतन, ब्रज भजन, रसिकन संग, रस रत्न ग्रन्थ। यह संयोग तो फिर मिलेगा नहीं। मिल गया तो पूर्ण रूप से लाभ उठा लें।

राधारानी अपने आप को किस प्रकार से लुटाती हैं? कैसे लुटाती हैं? *प्रविष्ट कर्णरन्ध्रेण;* कैसे प्रवेश करती हैं हमारे हृदय में? ये कानों के माध्यम से प्रवेश करती हैं, यह रस कथा के माध्यम से। हमें पता है कि राधारानी ऐसी हैं, तो अब जो हम दर्शन करेंगे; अब जो बाँके बिहारी जाओगे, तो दर्शन करोगे तो क्या राधारानी के दर्शन हो जाएँगे? हाँ..! तो राधारानी के दर्शन करने हैं आपने? तो करो! पट खोलो मन्दिर का, दर्शन करो। पट कैसे खोलना है? यह ग्रन्थ खोला, पट खोला - कर दर्शन..., कर राधा रूपामृत का पान। *पाद-स्पर्श रसोत्सवं, तस्य कटाक्षशरघात विमूर्च्छितस्य।*

"राधानामसुधारसं रसयितुं जिह्वास्तु मे विह्वला
पादौ तत्पदकांकितासु चरतां वृन्दाटवीवीथिषु।
तत् कर्मैव करः करोतु हृदयं तस्याः पदं ध्यायता-
तद् भावोत्सवतः परं भवतु मे तत्प्राणनाथे रतिः।।"

(श्रीश्रीराधारस-सुधानिधि १४२)

ये कर के द्वारा राधारानी के लिए कर्म करें; ठाकुर के लिए नहीं।

और हम जीवन जो है, राधारानी से अन्तर आएगा जिस क्षण, तो किससे अन्तर आ रहा है? आनन्द से। जिस क्षण राधारानी को बिसरा रहे हैं..., भूल रहे हैं, तो किस क्षण किस चीज़ को भूल रहे हैं? आनन्द को, Happiness को। तो किसका नुकसान है? राधारानी की सेवा के अलावा जो भी किसी का भी गुणगान है, सब बलाएँ हैं..., विक्षेप हैं; कोई किसी का..., कोई काम का नहीं है। और कोई भी आप गुणगान करो, तो किसलिए करो किसी का? कुछ प्राप्ति हो जाएगा? यह तो प्राप्त है। प्राप्त है। प्राप्ति तो करना नहीं है; तो किसी का गुणगान या कुछ भी करके क्या होगा? हरि का गुणगान भी क्यों करो? एक कार्य के लिए कर सकते हो- जब राधारानी मूर्च्छित हों या राधारानी विरह में हों, तो उनको कृष्ण कथा का पान करवाना हो; हाँ तो हरि कथा, ये वाली हरिकथा करें। नहीं तो हमने जीवदशा और यह दशा और वह दशा का..., सिर्फ ऐश्वर्य रूपी जो ग्रन्थ हैं, वो पान करके क्या होगा?

ये जो ग्रन्थ हैं गोस्वामीगण के- ये ऐश्वर्य और माधुर्य समालंकृत हैं। कैसा है? समालंकृत। ये दोनों का एकदम नायाब मिलन है, ये गोस्वामी ग्रन्थ। ये रस रत्न हैं, ये हीरा हैं। ये युगल सरकार ही हैं ये रस; ये अलग नहीं है। प्राप्त युगल सरकार को करना है; ये तो प्राप्त हैं। निकुंज में जाना नहीं है; ये तो निकुंज ही है। जाओगे क्या; ये तो हैं। ये ही तो है निकुंज। हमें कोई प्राप्त थोड़े न करना है। कोई विभिन्न तीर्थ भ्रमण; ए तो मनेर भ्रम..., ए सब तो मनेर भ्रम। कोई यह तीर्थ है..., वह तीर्थ है; अरे ये ही तो तीर्थ है। तुम जब चाहो डुबकी मारो।

ये रस रत्न को समझने के लिए सन्तों का संग, रसिक सन्तों का ओट चाहिए होती है, ओट- उनका आश्रय; ओट मतलब आश्रय। आश्रय में रहकर यदि भजन करें, तो राधारानी दूर नहीं हैं। आप यह समझो कोई दूर हैं - नही! यह सब कुछ प्राप्त है; कहीं जाना नहीं है कहीं पर भी।

जो राधारानी की भुजलता है, भुजलता, इनके समान किसी की भुजलता नहीं है। इनके समान..., इतनी सुंदर भुजलता किसी की हो नहीं सकती; इतनी सुंदर है। एक बार इस पर मन पड़ जाए तो वहीं डूब जाएगा; बाहर ही नहीं आएगा। ऐ भुजलता! कपोल प्रदेश! वो इतना सुंदर। चिबुक! वो इतना सुंदर। नयन! वे इतने सुन्दर। यदि वे मुस्कुरा दें; आहा! खुशी से आपकी ओर देखकर। आपने सेवा की। ठाकुर मूर्च्छित अवस्था में हैं और ठकुरानी हमेशा क्या चाहती हैं? क्या चाहती हैं? ठाकुर को आनन्द देना, उनकी सेवा करना। वे विमूर्च्छित हैं, वे सेवा कैसे करेंगी राधारानी? यदि आप उनकी मदद करते हो ठाकुर की सेवा में, तो राधारानी कितनी खुश होंगी। वे कितना मुस्कुराएँगी आपके ऊपर; वे आपके ओर देखकर मुस्कुराएँगी,

तो आप कितना खुश होगे.., कितना खुश होगे। आप यह सोचो- कई बार हमने कई सन्तों से सुना है कि गुरु अगर किसी को मुस्कुरा दें, तो वो छवि नहीं भूलती, गुरु के मुस्कुराहट की; वे तो प्रेम का Messenger हैं। वे प्रेम की स्वरूप हैं; यदि वे मुस्कुरा दें तो ठाकुर ही मूर्च्छित हो जाते हैं, तो आपकी क्या दशा होगी? सम्भाल नहीं सकते राधारानी के रूपामृत को..., उनकी कृपा को।

तो जो प्रियता है, प्रियता राधारानी में होनी चाहिए। उनके नाम में होनी चाहिए, उनके धाम में होनी चाहिए, उनके जन में होनी चाहिए। तो यदि हमारी प्रियता, अगर उनके जन में हो गई..., जो उनके जन हैं, निज जन हैं अपने, तो उनमें प्रियता होने से अपने आप ही राधारानी के नाम में भी प्रियता हो जाएगी, राधारानी के धाम में भी प्रियता हो जाएगी, राधारानी की सेवा में भी प्रियता हो जाएगी। तो प्रथम है - उनके जन में प्रियता।

यद्यपि राधारानी का जो स्वरूप है, वो अति रुचिकारी है। कितना रुचिकारी? अति..., रुचिकारी। किसके लिए? ठाकुर के लिए भी। रुचिकारी मतलब जो आप भोजन करते हो जब, उसमें रुचि आती है, कुछ सोच सकते हो उसके अलावा? बस वही भोजन स्मरण रहता है; उसके अलावा कुछ स्मरण नहीं रहता। तो ये जो आहार है- रूपामृत, गन्धामृत, श्रवणामृत, ये जो आहार है ~ ये अति रुचिकारी है। ये जो रस का पान है, हम सोचते हैं रस जो है physical terms में, रस का मतलब..., रस कोई पानी की तरह नहीं बह रहा। यह कथा रूप में इस जगत में बह रहा है; इसका पान करो। अति भाग्यवान् व्यक्ति को राधारानी की कथा का..., इस भजन का..., से जोड़ हो पाता है। तो कहीं झरने में रस नहीं बह रहा; यह ही रस बह रहा है।

अपना भाग्य मनाए। जाने, कि राधारानी का हृदय जब द्रवित हो जाता है..., हाँ ! राधारानी का हृदय जब द्रवित हो जाता है, तो वे किसी को रसिक सन्तों का संग देती हैं। जब दे दिया..., वे संग देती हैं; वह संग से वे राधा को देते हैं। राधा संग देती हैं; संग राधा देता है।

"भजन न होय संग बिना और भजन बिना नाहि प्रेम।।"

भजन जो है, वो संग बिना हो नहीं सकता। और बिना प्रेम के..., और जब संग नहीं होगा तो प्रेम उत्पन्न नहीं होगा। और जब प्रेम उत्पन्न नहीं होगा, तो आनन्द आस्वादन कैसे होगा? प्रेम होगा तो आनन्द आस्वादन होगा। प्रेम तब होगा जब संग होगा। इसलिए कहा जाता है-

"साधुसङ्ग साधुसङ्ग सर्वशास्त्रे कय।
लव-मात्र साधुसङ्गे सर्वसिद्धि हय।।"

(श्री श्री चैतन्य चरितामृत् मध्य लीला २२.५४)

जो वास्तविक सन्तों का संग है, वह एक बार का संग जो है पूरा जीवन बदल देगा; एक बार का संग। एक बार का..., पूरा जीवन बदल देगा। अरे! कृष्ण जिस प्रकार से जीवित अवस्था में होते हैं, वे जीवन बदल देते हैं, तो एक बद्ध जीव का जीवन बदलने में क्या बड़ी बात है।

कृष्ण के सुख का वर्णन यद्यपि हो नहीं सकता; पर फिर भी कहें तो हो सकता है। सुख का नहीं, भाग्य का कह सकते हैं। कृष्ण के भाग्य का वर्णन सम्भव है। राधारानी के भाग्य का वर्णन..., राधारानी को 'सौभाग्यवती', 'परम सौभाग्यवती' बोला जाता है, उनके भाग्य का वर्णन भी सम्भव है। कृष्ण के भाग्य का वर्णन सम्भव है, राधारानी के भाग्य का वर्णन सम्भव है, पर जो मंजरी है, उसके भाग्य का वर्णन ही सम्भव नहीं है। आपके भाग्य का यदि कोई वर्णन करना चाहे; आप करना चाहो, तो आप कर ही नहीं सकते। आप वर्णन कैसे करोगे अपने भाग्य का? कैसे वर्णन करोगे आप? आपका भाग्य ही वर्णनातीत है, तो आपका आनन्द कितना वर्णनातीत होगा। आपके भाग्य का वर्णन कोई बृहस्पति..., सरस्वती भी करना चाहे, वो नहीं कर सकते। अरे लक्ष्मी को यह भाग्य प्राप्त नहीं है, जो आपको प्राप्त है। दिन-रात क्या करो? अपना भाग्य मनाओ। राधारानी की सेवा करें, राधारानी का नाम लें, अनन्य होकर जियें, सारे रसों को भूल जाएँ- ये जगत के और वो जगत के भी।

जब मंजरी सेवा कर रही है, तो उसे कोई ब्रज के किसी और रस का स्मरण हो रहा है क्या? वैकुण्ठ के रस का स्मरण हो रहा है क्या? या इस जगत का कोई कूड़ा-कबाड़ा कोई स्मरण हो रहा है क्या? नहीं। तो हर जगत की हर बात को भूलकर एक बात को पकड़ना है-

"मेरी सर्वस्व स्वामिनी जी, मोर ओर कछु सुहाय नहीं।"

मुझे और कुछ नहीं सुहाता, मेरी सर्वस्व स्वामिनी हैं। जब राधारानी के अलावा और कछु सुहाय नहीं...और अतिरिक्त कुछ रह न जाए जीवन में, तो समझ लो राधारानी की कृपा हो गई। *मोरी सर्वस्व धन स्वामिनी जी।*

जो ठाकुर का धन है, वही आपका धन है। *नवं नवं महा आपदी,* जिस प्रकार से ठाकुर-ठकुरानी नये-नये आनन्द को प्राप्त करते रहते हैं, उसी प्रकार से अपनी सखियों को भी..., *सखी समेतो,* एक श्लोक में वर्णन आता है, कि वो सारा आनन्द, *नवं नवं,* नया-नया आनन्द... और रसान्ध कर देती हैं सखियों को...,

मंजरियों को। जो अन्य भक्त हैं, वे भी आनन्द आस्वादन करते हैं; बूंद माफ़िक। परन्तु जो मंजरियों को आनन्द मिलता है, यानि कि आपको जो आनन्द मिलेगा सेवा करके, वो आपको रसान्ध कर देगा। रसान्ध- रस में अन्धा। समझ रहे हैं? रसान्ध! यह प्रबोधानन्द सरस्वती बता रहे हैं - *रसान्ध सखीं।* कैसे आनन्द वर्णन होगा, जब रसान्ध कर दिया जाएगा?

तो हमें राधारानी उतनी ही प्रिय होनी चाहिए, जैसे मछली..., मीन, मीन को जल प्रिय है..., Fish को water प्रिय है..., मीन को जल प्रिय है..., चकोर को चन्द्रमा प्रिय है, कम से कम उतनी प्रिय तो हमें भी राधारानी होनी चाहिए; *मेरी सर्वस्व धन स्वामिनी जी, मोरे ओर कछु सुहाय न।* हृदय से बोल सकें हम कि, "हाँ राधारानी, आप ही मेरे को सबसे प्रिय हो; कोई प्रिय नहीं है, कोई भी।" जिस दिन बोल दिया हृदय से ~ राधारानी दूर थोड़ा न हैं। इसलिए प्राप्त करना नहीं है, यह तो प्राप्त है। हमें राधारानी के अलावा और कुछ सुहायेगा नहीं, तो किस बात का वे इंतज़ार करेंगी, बताईये? हमें कुछ सुहाता है, इस बात को बस हटा दें... और राधारानी का स्पामृत पान करें, उसी छवि में..., छटा में निरन्तर मत्त रहें। उन्हीं कपोल देश का चिन्तन करें, चिबुक देश का चिंतन करें, उनके कटाक्ष का चिन्तन करें, उनके नयन का चिन्तन करें, उनके सर्वाङ्ग का चिन्तन करें। युगल सेवा ही तो अपन ने करनी है। तो सेवा करो; अपना भाग्य मनाओ। किसका इंतज़ार करेंगे?

यह रूप नहीं है; यह अमृत है, यह रस है- यही आप चाहते हैं, यही हम चाहते हैं। यह रस की परमावस्था है; इसको दर्शन करने के बाद और कोई दर्शन करने की इच्छा नहीं होगी। अरे बाबा आनन्द प्राप्त कर लिया; उसके बाद क्या प्राप्त करना रह जाएगा?

जो हरे कृष्ण महामन्त्र कर रहे हैं..., जीव की दशा तो भगवद् नाम लेकर, जीव की जो मन की चंचलता है, वह समाप्त हो सकती है। पर जो हरे कृष्ण महामंत्र कर रहें हैं उनकी मन की चंचलता तब तक समाप्त नहीं होगी जब तक वे राधारानी के अनन्य भक्त नहीं होंगे।

तो आप सब राधारानी की अनन्य भक्ति कर पाएँ, अपने इस अनूप जो संयोग, कृपा राधारानी की प्राप्त हुई है ~ मानुष तन, ब्रज भजन, रसिकन् संग; यह सब जो प्राप्त हुआ है, इसका लाभ उठाएँ। यह ही आशा है। यह ही प्रार्थना है।

हरे कृष्ण।